International Journal of Multidisciplinary Research and Development

Volume: 2, Issue:7, 312-316
July 2015
www.allsubjectjournal.com
e-ISSN: 2349-4182
p-ISSN: 2349-5979
Impact Factor: 3.762

किरण ग्रोवर
एसो॰प्रो॰, स्नातकोत्तर हिन्दी
विभाग,डी॰ए॰वी॰ कॉलेज, अबोहर,पंजाब।

Correspondence:
किरण ग्रोवर
एसो॰प्रो॰, स्नातकोत्तर हिन्दी
विभाग,डी॰ए॰वी॰ कॉलेज, अबोहर,पंजाब।

औपन्यासिक वैचारिक मन्थन में राजनीतिक विघटन विमर्श की संकल्पना

किरण ग्रोवर

सारांश
राजनीति में स्वार्थ और सत्ता हथियाने की ललक ने अनेक राजनैतिक विसंगतियों को जन्म दिया परिणामतः समाज में राजनीतिक विघटन साम्प्रदायिकता, जातिवाद, भ्रष्टाचार, शोषण तथा दलीय प्रतिबद्धता के रूप मे प्रस्फुटित हुआ। साहित्य रचना सामाजिक व्यवस्था के अनुसार ही विनिर्मिति होती है। समाज की सारी व्यवस्थाओं को साहित्यकार सांकेतिक रूप में अपनी रचनाओं में समेट कर रचना क्षेत्र को समृद्ध करता रहता है। इस प्रकार उपन्यासों के अन्तर्गत देश में राजनैतिक मूल्यों का विघटन बहुरूप में देखने को मिलता है, राजनीति के असामंजस्य से उत्पन्न विरसता ने वर्तमान भारतीय परिवारों को विश्रृंखलित ही नहीं किया है, अपितु भावी जीवन में पारिवारिक जीवन के सम्बन्धों के बिखराव को भी इंगित कर दिया है। इस प्रकार राजनीतिक विघटन विमर्श के माध्यम से अन्तर्गत यादवेन्द्र शर्मा, श्रीलाल शुक्ल ,भगवती चरण वर्मा, फणीश्वर नाथ 'रेणु',भैरव प्रसाद गुप्त, अनन्त गोपाल शेवडे, कमलेश्वर, मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में देश में राजनैतिक मूल्यों का विघटन का बहुरूप देखने को मिलता है, यह देश की राजनीति की विडम्बना है। राजनेताओं की स्वार्थ–भावना, भ्रष्टाचार तथा पद–लोलुपता का अनवरत चलने वाला क्रम राजनीति में आज भी जारी है। जातिवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार आदि भारतीय समाज की प्रगति के मार्ग में भी विशाल अवरोधक हैं; इन तत्वों का बहिष्कार जब तक भारतीय जन–जीवन से नहीं होगा, तब तक देश और समाज की प्रगति में प्रश्नचिह्न लगे ही रहेगें।

बीज शब्दःराजनीति, विघटन विमर्श, औपन्यासिक, विरसता, संकल्पना।

मूल प्रतिपादन

आज के युग में मनुष्य स्वार्थों की पूर्ति हेतु जातीयता और साम्प्रदायिकता का सहारा ले रहा है। आज राजनीति शब्द सुनते ही हमें ऊब आती है, राजनीति का स्तर इतना नीचे गिर गया है कि यहाँ शब्दों में चित्रित करना असम्भव है। आज पूरे देश में राजनैतिक भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर है। आये दिन हम कभी टी॰वी॰ पर समाचार सुनते हैं, तो कभी अखबार व समाचार पत्रों में नेताओं के घोटालों के किस्से सुनते व देखते हैं। भारतीय राजनीति की वर्तमान स्थिति के विषय में यदि बात की जाए तो कई आकड़े ऐसे हैं जो राजनीतिक भ्रष्टाचार को प्रत्यक्ष रूप से दर्शाने के लिए काफी हैं। राजनीति में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी और नौकरशाही चरम सीमा पर पहुँच गई, सामान्य वर्ग की उपेक्षा के कारण व्यक्ति की आर्थिक स्थिति निरन्तर गिरती चली गई। राजनीति में धर्म, जाति, क्षेत्रवाद, भाषा आदि के मुद्दे चुनाव का आधार बन गए। परिणामतः देश में धर्मगत एवं जातिगत राजनीति व्यापक रूप से उभरी तथा दलीय स्वार्थ की भावना प्रबल हुई। आज राजनीति में सफलता हेतु राजनेताओं ने भारतीय समाज की मानसिकता को प्रभावशाली ढंग से धर्म एवं जाति के संकीर्ण वर्गों में विभक्त कर दिया है।[1] राजनीतिक विघटन से तात्पर्य राजनीतिक व्यवस्था में मूल्यों का निरंतर ह्रास होना। कोई भी राजनीतिक दल ऐसा नहीं है, जिसका दामन इन दागों से सना हुआ न हो। येन–केन प्रकारेण अपने प्रतिद्वन्द्वी को मात देकर प्रत्येक राजनीतिज्ञ आगे बढ़ना चाहता है। जहाँ सत्ता इतनी बड़ी वस्तु हो, तो उसे पाने के लिए राजनीतिज्ञ शोषण, षड़यन्त्र, धोखेबाजी, अवसर–वादिता का होना स्वाभाविक है।राजनेता व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति हेतु दल–बदल की नीति अपनाने लगे। राजनीति में स्वार्थ और सत्ता हथियाने की ललक ने अनेक राजनैतिक विसंगतियों को जन्म दिया।[2] परिणामतः साहित्य में राजनीतिक विघटन विमर्ष उपन्यासों के माध्यम से साम्प्रदायिकता, जातिवाद, भ्रष्टाचार, शोषण तथा दलीय प्रतिबद्धता आदि के रूप मे प्रस्फुटित हुई।

विघटन मूलतः एक वृत्ति एवम् स्थिति का नाम है। विघटन में मूलतः पृथक्ता, भ्रष्टता व विनाषता निहित होती है। विघटन में पार्थक्य, बिखराव, टूटन, बर्बादी आदि विषयक सोच विचार व चिन्तन होता है। मानव जाति के विकास के लिए विघटनकारी मानसिकता एक बहुत बड़ा अवरोध है। वर्तमान परिवेश में व्यक्ति, परिवार व समाज के स्तर पर विघटन की स्थिति दृष्टिगत होती है। शासकीय व्यवस्था भ्रष्टाचार से खोखली होती जा रही है। अति बौद्धिकता अहंकार को जन्म देती है जिससे विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है। विघटन शब्द का कोशगत अर्थ 'हिन्दी विश्वकोष' में इस प्रकार दिया गया हैः–''विश्लेषण, संयोजक अंगों को अलग अलग करना।तोड़ना, फोड़ना। विरोध, नष्ट करना।''[3]

'मानक हिन्दी कोश' में विघटन के अर्थ के सम्बन्ध के बारे में लिखा है–''किसी वस्तु के संयोजक अंगों को इस प्रकार अलग या नष्ट होना कि उसका प्रस्तुत अस्तित्व या रूप नष्ट हो जाये।'[4] मुकन्दी लाल श्रीवास्तव जी ने लिखा हैः–''विघटन अर्थात् अलग करना, तोड़ना, छिन्न भिन्न करना, नाश बरबादी।'[5]भाषा वैज्ञानिक हरदेव बाहरी जी ने विघटन का अंग्रेजी पर्याय डिसइनटैगरेशन disintegration बताया है।[6] 'बृहत् हिन्दी मराठी कोश में विघटन का आशय इस प्रकार स्पष्ट किया गया हैः–''डीसोल्यूशन, पृथक्करण, नाश, डीकम्पोजिशन।[7] वामन शिवराम आप्टे ने विघटन को इस प्रकार व्यक्त किया है:–विमर्श आधुनिक काल के चिन्तन का विषय है। विघटन की स्थितियां इसी कालखण्ड का सच अ लग अलग करना, बर्बादी या विनाश।''[8] विघटन के कारणों पर प्रकाश डालते हुए नीरज जैन जी ने लिखा हैः–'' आधुनिक सभ्यता व ज्ञान विज्ञान के प्रसार ने मनुष्य में अतिशय भौतिकतावादी दृष्टि ही प्रसार नहीं किया अपितु उनके मूल्यों को भी विघटित करके रखा है।''[9]

वर्तमान में जब साहित्य परिचर्चा होती है तो 'विमर्श' शब्द स्वतः बहस के केन्द्र में आ जाता है। शब्द प्रयोग की दृष्टि से 'विमर्श' ' शब्द अत्यन्त प्राचीन है।'विमर्श' का अर्थ है–सोच विचार कर तथ्य या वास्तविकता का पता लगाना, किसी बात या विषय पर कुछ सोचना, समझना, विचार करना, गुण–दोष आदि की आलोचना या मीमांसा करना, जांचना और परखना, किसी से परामर्श या सलाह करना, ज्ञान।[10] विमर्ष' शब्द अत्यंत व्यापक है, जिसकी उत्पत्ति मृष् धातु में वि–उपसर्ग तथा घञ् प्रत्यय लगाकर हुई है। अतः 'विमर्ष' शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ विचार–विमर्श, सोचना, समझना, आलोचना करना नालन्दा विशाल शब्द सागर में विमर्श को, "किसी बात का विचार या विवेचन, आलोचना, समीक्षा, परीक्षा, परखने का काम परामर्श, सलाह, अधीरता, असंतोष।"[11] के अर्थ में लिखा गया है। मानक अंग्रेजी हिन्दी कोश 'डेलीबरेट' का अर्थ, सुचिंतित, जानबूझकर किया गया, इरादे के साथ, विचारपूर्वक सोद्दश्य, निश्चित और सुचिंतित बताए गये इसके अन्य अर्थ सचेत, चौंकना, सावधान, विवकेशील, सोच–समझकर फैसला करने वाला, बताए है[12] अर्थात, विमर्श का अर्थ सलाह करना, बहस करना, विचार–विमर्श, सोच–विचार, सलाह–मंत्रणा, वाद–विवाद, धीरता सतर्कता है।

विमर्श शब्द सोच विचार, विचार विनिमय,चिन्तन मनन को द्योतित करता है। वास्तव में किसी विषय विशेष के सन्दर्भ में गंभीरता से चिन्तन, मनन , विवेचन, , विचार विनिमय व सोच विचार करना विमर्श कहलाता है। विमर्श ही समकालीन उपन्यासों की शक्ति है।[13]समाज और साहित्य एक दूसरे के पूरक होते हैं। साहित्य रचना सामाजिक व्यवस्था के अनुसार ही विनिर्मिति होती है। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था से प्रभावित होकर साहित्यकार अपनी रचनाओं की सृष्टि करता है। सामाजिक व्यवस्था की निरन्तरता हर कृति में एक प्रकार की नहीं होती। साहित्य के परिवर्तन के साथ ही सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन आने की संभावना होती है। समाज की सारी व्यवस्थाओं को साहित्यकार सांकेतिक रूप में अपनी रचनाओं में समेट कर रचना क्षेत्र को समृद्ध करता रहता है। समाज और साहित्य एक दूसरे के पूरक होते हैं। साहित्य रचना सामाजिक व्यवस्था के अनुसार ही विनिर्मिति होती है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, इसलिए कुछ सामाजिक व्यवस्थाओं का सामना करना पड़ता है। समाज में स्थित इन व्यवस्थाओं में अर्थात् जातीय, नैतिक, शैक्षणिक आदि सामाजिक व्यवस्थाएं शामिल होती हैं, इन सामाजिक व्यवस्थाओं का जिक्र न करने से साहित्य रचना अधूरी रह जाती है।[14] तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था से प्रभावित होकर साहित्यकार अपनी रचनाओं की सृष्टि करता है। समाज की सारी व्यवस्थाओं को साहित्यकार सांकेतिक रूप में अपनी रचनाओं में समेट कर रचना क्षेत्र को समृद्ध करता रहता है। साहित्य की अनेक विधाएं हैं, इन विधाओं में उपन्यास अपने आप में महत्त्वपूर्ण है। समाज में घटित घटनाओं का अत्यन्त सजग बोध उपन्यास के द्वारा मिलता है। उपन्यास जीवन का वैज्ञानिक व दार्शनिक अध्ययन है। जीवन इस सजग बोध व बोध वृत्ति से मनुष्य की बौद्धिकता या चेतना व्यापक हो जाती है।[15] रमेश देव ने लिखा है कि' साहित्यकार को समाज से मनुष्य मिलते हैं,वस्तुएँ मिलती हैं, विषय मिलते हैं,घटनाएँ और पात्र मिलते हैं,तरह तरह के विश्वास, अविश्वास, अन्धविश्वास मिलते हैं, लोकाचार, लोक प्रसंग और सांस्कृतिक आधार मिलते हैं, ये सब जब समाज में हैं, सहज, सामान्य और जीवनगत जरूरतें बनकर भी जुड़े हैं लेकिन ये सब जब सर्जक के पास आते हैं तो मनुष्य चरित्र या पात्र में बदल जाते हैं, घटनाएँ और स्थितियाँ परिवेश बन जाती हैं।'[16]

साहित्य की अनेक विधाएं हैं, इन विधाओं में उपन्यास अपने आप में महत्वपूर्ण है। समाज में घटित घटनाओं का अत्यन्त सजग बोध उपन्यास के द्वारा मिलता है। इस सजग बोध व बोध वृति से मनुष्य की बौद्धिकता या चेतना व्यापक हो जाती है।मनुष्य सामाजिक प्राणी है, इसलिए कुछ सामाजिक व्यवस्थाओं का सामना करना पड़ता है।समाज में स्थित इन व्यवस्थाओं में अर्थात् जातीय, नैतिक, शैक्षणिक आदि सामाजिक व्यवस्थाएं शामिल होती हैं, इन सामाजिक व्यवस्थाओं का जिक्र न करने से साहित्य रचना अधूरी रह जाती है। आधुनिक काल में विमर्शवादी अवधारणा के अन्तर्गत उत्तर आधुनिक विमर्श, स्त्री विमर्श, झुग्गी झोंपड़ी विमर्श, आदिवासी विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, सत्ता विमर्श, शिक्षा विमर्श, सेक्स विमर्श, राजनीतिक विघटन विमर्शा, श्रमिक विमर्श, बाज़ार विमर्श, पंजाबी संस्कृति विमर्श आदि का समकालीन उपन्यासों में विश्लेषण किया गया है जिनमें से राजनीतिक विघटन विमर्श का प्रारूप औपन्यासिक वैचारिक मन्थन में इस प्रकार हैः–

राजनीतिक विघटन से तात्पर्य राजनीतिक गतिविधियों में विखंडन या उनका टूटना तथा शोषित होना। अन्य शब्दों में कहें तो ''तोड़ना, अलग करना, द्विन्न–भिन्न करना'' राजनीति से सम्बन्धित व्यवस्था का छिन्न–भिन्न होना या बरबादी की ओर जाना ही राजनीतिक विघटन को दर्शाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो राजनीतिक विघटन से तात्पर्य–राजनीतिक व्यवस्था में मूल्यों का निरंतर ह्रास होना। आज राजनीति के नाम पर देश के साथ छल होता है। प्रतिदिन घोटाले, मारकाट, हत्या तथा धोखा तो जैसे राजनीतिक दल का अधिकार हो गया हो।[17] जहाँ सत्ता इतनी बड़ी वस्तु हो, तो उसे पाने के लिए राजनीतिज्ञ शोषण, षड़यन्त्र, धोखेबाजी अवसर–वादिता का होना स्वाभाविक है।

राजनीति में स्वार्थ और सत्ता हथियाने की ललक ने अनेक राजनैतिक विसंगतियों को जन्म दिया। राजनीति में सिद्धान्त आदर्श,नैतिकता, अच्छे मार्ग दर्शन, स्वस्थ विचार आदि के लिए कोई स्थान नहीं है।सत्ता प्राप्ति प्रत्येक राजनीतिज्ञ का उद्देश्य हो गया है। येन–केन प्रकारेण अपने प्रतिद्वन्द्वी को मात देकर प्रत्येक राजनीतिज्ञ आगे बढ़ना चाहता है। 'यादवेन्द्र शर्मा' 'चन्द्र' के उपन्यास 'एक और मुख्यमन्त्री' में शिवशंकर गाँधीवादी विचार के स्वामी हैं जो देश की स्वतंत्रता के लिए जीवन भर संघर्ष करते हैं। स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीति में हुए विघटन के विषय में कहते हैं कि –'आजादी के बाद देश का मॉरल खण्डित ही हुआ है, जातीयता, धार्मिक संकीर्णता, भ्रष्टाचार, भाषाई दंगे क्या नहीं हुए। स्वस्थ परम्पराएँ जीवित नहीं रही हैं। वे ही राष्ट्र नायक जो ज़िन्दगी को खेल समझते थे, वे ही ज़िन्दगी को सजाने सँवारने और विलासमय बनाने के लिए कटिबद्ध हो गये हैं।''[18] समकालीन राजनीति स्वार्थपरता एवं लोलुपता ने राजनैतिक शोषण को बढ़ावा दिया है। राजनीति में झूठ, भ्रष्टाचार, अनीति ही प्रेरक मंत्र है। यदि कोई व्यक्ति ईमानदारी से कार्य करता है तो उसे सत्ता से बाहर निकाल दिया जाता है राजनीति में धर्म, जाति, क्षेत्रवाद, भाषा आदि के मुद्दे चुनाव का आधार बन गए। परिणामतः देश में धर्मगत एवं जातिगत राजनीति व्यापक रूप से उभरी तथा दलीय स्वार्थ की भावना प्रबल हुई। राजनेता अपनी हित–साधना की दृष्टि से भ्रष्ट से भ्रष्ट नीतियों का निर्वहन करने लगे।[19]'एक और मुख्यमंत्री' मे मुख्यमन्त्री रांची प्रदेश अध्यक्ष पद के प्रत्याशी त्रिवेदी जी के विषय में कहती है कि –''मैं यह पराजय स्वीकार नहीं करूँगी। त्रिवेदी को हारना जरूरी है.....। जरा सोचिए, हमारे लोग जानते हैं कि

हम उनके लिए कितना धन खर्च करते हैं। विकास के नाम पर, पंचायत के नाम पर।''[20] इस प्रकार सम्पूर्ण गाँव दलीय प्रतिद्वन्द्विता का केन्द्र बन गया है।इसी उपन्यास में पूँजी–पति वर्ग जमींदारों, रियासती नरेशों को मिलाकर देश के सभी प्रकार के उद्योगों को हथियाना चाहते हैं। ठाकुर मोहन सिहं राजनैतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए अरविन्द से कहता है कि –''सेठ जी आये थे, कह रहे थे कि हिन्दू महासभा से त्यागपत्र देकर कांग्रेस में सम्मिलित हो जाता हूँ। सत्तारूढ़ सस्था से ही हम अपने अधिकारों स्वार्थों और हितों की रक्षा कर सकते हैं।''[21] इस तरह व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति कर सत्ता में बना रहना चाहते हैं, देश में चुनाव की घोषणा के पश्चात् दलीय प्रतिद्वन्द्विता देखने को मिलती है।इस प्रकार राजनीतिज्ञों ने सत्ता–प्राप्ति के लिए भ्रष्टाचार को जन्म दिया है। नेता सरकारी भ्रष्टाचार तथा गुण्डों का सहारा लेकर आम चुनावों में कानून को ताक पर रख कर धन लुटा कर चुनाव जीतना प्रमुख उद्देश्य मानते हैं। आज राजनीति में बाहुबली, अत्याचारी लोग प्रवेश कर चुके हैं। आज नेता भ्रष्टाचार में लिप्त होकर जन–साधारण की उपेक्षा करते हैं। वर्तमान राजनीति में नेताओं का बहुमुखीपतन हो गया है –'एक और मुख्यमन्त्री' उपन्यास में कांग्रेस अध्यक्ष दीनाराम मुख्यमन्त्री त्रिवेदी से नेताओं में व्याप्त भ्रष्टाचार का उल्लेख करते हुए कहते हैं – ''यदि देश में सारे मिनिस्टरों के घरों और उनमें टंगे हुए कपड़ों की जेबों की तलाशी ली जाए तो सब में रिश्वत के पैंसे मिल जायेगें।''[22]।

राजनीतिक विघटन को आधुनिक शिक्षा ने भी पुष्ट किया। समाज में मूल्यों के विघटन से जैसे मानवता का ह्रास हो गया, चुनाव के समय नेताओं द्वारा दिए जाने वाले समानता, गरीबी–उन्मूलन और सशक्त राष्ट्र जैसे नारे खोखले होने लगे, जनता ने सरकार से जो आशाएँ की थीं, वह अल्प समय में ही नष्ट हो गईं; पूँजीवाद को निरन्तर समर्थन मिलता गया, काला धन्धा करने वाले पूँजीपति और अधिक समृद्ध होते गये। निर्धन और धनवानो ं के मध्य खाई चौड़ी होती चली गई। उच्च पदस्थ शासकीय अधिकारी तथा मन्त्री अपने पद का दुरूपयोग करने लगे। श्रीलाल शुक्ल के 'रागदरबारी' उपन्यास में शिवपाल गंज का छंगामल इण्टर कॉलेज राजनैतिक शोषण का मुख्य केन्द्र बना हुआ है। कॉलेज के प्रबन्धक वैद्य जी वैद्यगीरी के साथ–साथ सहकारी समिति के प्रबन्धक निदेशक का पद भी संभाले हुए है। कॉलेज के मैनेजरी पद के लिए चुनाव आडम्बर मात्र है। कॉलेज की प्रबन्ध समिति की बैठक बन्दूक के बल पर होती है। इस बैठक में केवल प्रिंसिपल साहब और वैद्यजी के दल के सदस्य ही प्रवेश कर सकते हैं। विरोधी दल के सदस्यों का प्रवेश वर्जित है। बलराम प्रिंसिपल साहब से कहता है कि –''असली विलायती चीज है, छः गोली वाली.....लौट जायेगें ।''[23] कॉलेज के चारों तरफ वैद्य जी के गुण्डे विरोधी दल के सदस्यों को टोकने के लिए निगरानी करते हैं। बलराम सिंह प्रिंसिपल साहब के गुट के छात्र से कहता है ''जरा बेटा, कॉलेज की पैकरमा.....भेज दे।''[24] इस प्रकार वैद्य जी छल–बल से कॉलेज के मैनेजर चुन लिये जाते हैं। शक्तिशाली पद प्राप्ति की लालसा ने व्यक्ति को भ्रष्ट बना दिया है। येन–केन प्रकारेण सत्ता में बने रहने की इच्छा से किये जाने वाले राजनैतिक प्रतिद्वन्द्वियों के उत्पीड़न, आतंकपूर्ण नियोजन समाचार पत्रों पर लगी कड़ी सेंसरसिप सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग आदि ने देश के राजनैतिक जीवन और जन–साधारण को बुरी तरह प्रभावित किया है।

वर्तमान राजनीति दलीय प्रतिबद्धता में बँधकर रह गई है। सत्तारूढ़ विरोधी राजनीतिक दलों की एकता तथा सहयोग की भावना से देश के विकास के लिए कार्य करना हास्यास्पद प्रतीत होता है। स्वाधीनता के पश्चात् देश में राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्विता का जन्म हुआ। राजनीति के सत्ता–मोह, दलीय स्वार्थ एवं आपसी प्रतिद्वन्द्विता ने देश को इस स्थिति तक पहुँचा दिया है, जिसका कोई समाधान नहीं दिखाई पड़ता। आज देश के ग्रामीण क्षेत्र भी राजनीतिक दलों से प्रभावित है। 'भगवती चरण वर्मा' द्वारा 'सबहिं नचावत राम गोसाईं' उपन्यास में ''नगर कांग्रेस कमेटी के वार्षिक चुनाव मे ं चिरंजी लाला चौरसिया अध्यक्ष पद के लिए पण्डित सदाशिव गौतम के विरुद्ध खड़ े होते हैं। गौतम जी के गुण्डों और जबर सिहं ने मिलकर चुनाव की पूर्व रात्रि को चौरसिया जी को भाँग पिलाकर एक मकान में बन्द कर दिया। इस प्रकार वे सर्व सम्मति से अध्यक्ष चुन लिये जाते हैं।''[25]

राजनीति के सत्ता–मोह,दलीय–स्वार्थ एवं आपसी प्रतिद्वन्द्विता ने देश को इस स्थिति तक पहुँचा दिया है, जिसका कोई समाधान नहीं दिखाई पड़ता। भारत में राजनीति की सफलता के लिए जातीयता का प्रयोग मोहरे के रूप में किया जा रहा है। आज तो व्यक्ति जातिगत ही सोचता है यही उसकी मानसिकता हो गई है। जातिगत दलबंदी भारत के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है। भारतीय समाज को जातिवाद के जहर ने अत्यधिक हानि पहुँचाई है। देश में परिवर्तित सामाजिक परिस्थितियों ने बड़े पैमाने पर परम्परागत मूल्यों को खंडित किया। फणीश्वर नाथ 'रेणु' के 'मैला आँचल' उपन्यास में दलीय प्रतिद्वन्द्विता को दर्शाया गया है, कालीचरण सोशलिस्ट पार्टी को मेरीगंज में स्थापित करता है। राजनीतिक दलों विस्तार पर व्यंग्य करती लक्ष्मी कोठारिन कहती है–''गाँव में तो रोज नया–नया सैंटर खुल रहा है मलेरिया सैंटर, काली टोपी, लाल झडां और अब चरखा सैंटर''[26] देश की राजनीति का निर्णय जाति के आधार पर होता है। कांग्रेस कम्यूनिस्ट जनसंघ आदि दल जातीयता के प्रति सतर्क हैं। 'मैला आँचल' उपन्यास में नेता कालीचरण मेरीगंज में सोशलिस्ट पार्टी के प्रचार के लिए गंगाप्रसाद सिंह यादव को भेजता है क्योकि मेरीगंज गाँव की सर्वाधिक जनसंख्या यादवों की है। ''मेरीगंज मे ं सबसे ज्यादा यादवो ं की आबादी है। वहाँ आपका जाना ही ठीक होगा। वहाँ ऑर्गेनाइज करने मे ं कोई दिक्कत नहीं होगी।.....वहीं, बस बलदेव है एक।''[27] यह देश की राजनीति की विडम्बना है। आज राजनीति में सफलता हेतु राजनेताओं ने भारतीय समाज की मानसिकता को प्रभावशाली ढंग से धर्म एवं जाति के संकीर्ण वर्गों में विभक्तकर दिया है। प्रत्येक राजनैतिक दल जाति एवं सम्प्रदाय के आधार पर चुनाव जीतना चाहता है।

भैरव प्रसाद गुप्त का 'सती मैया का चौराहा' उपन्यास में गाँव में दलीय प्रतिद्वन्द्विता देखने को मिलती है। गाँव में ग्राम पंचायत का चुनाव, स्कूल निर्माण आदि की बैठक होती है तो वहाँ सभी दलों के कार्यकर्ता रहते हैं। मुन्ने और मुन्नी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ता होने के कारण अलग–अलग पड़ जाते हैं। मुन्ने कहता है –''पंचायत कांग्रेस के हारे हुए व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति रखती है। मुन्ने कांग्रेस का रहस्य खोलता है – पंचायत सेक्रेटरी बाबू साहब के गाँव का एक कांग्रेसी कार्यकर्त्ता है। वही बता रहा था और कह रहा था कि हम किसी और कांग्रेसी पंचायत को किसी भी हालत में नहीं चलने देगे। मैंने कहा तुम तो सरकारी आदमी हो। तुम्हें उन बातों से क्या मतलब? जो भी पंचायत चुनी जाए, वह कानून के मुताबिक काम करें, बस यही देखना तुम्हारा काम है। वो बोला, सरकार तो हमारी है, पंचायत दूसरी पार्टी की कैसे हो सकती है? महाबग्गड़ आदमी है।''[28]

इस प्रकार ग्राम पंचायतों में भी दलीय प्रतिद्वन्द्विता देखने को मिलती है। फणीश्वर नाथ रेणु के उपन्यास 'परतीः परिकथा' ''मे ं जितेन्द्र गाँव के बदलते स्वरूप पर दुःखी है। गाँव का प्रत्येक व्यक्ति राजनीति और प्रतिद्वन्द्विता में लिप्त है। गाँव मे कांग्रेस कम्युनिस्ट पार्टी सोशलिस्ट आदि दलों की प्रतिद्वन्द्विता है। बहुत उन्नत गाँव है परानपुर। सात–आठ हजार की आबादी है, प्रत्येक राजनीति पार्टी की शाखा है; यहाँ धार्मिक संस्थाओं के कई धुरन्धर धर्मध्वजी इसी गाँव में विराजते हैं।..... पिछले आम चुनाव मे ं सॉलिडवोट कांग्रेस को नहीं मिला, इसलिए इस बार सॉलिड वोट प्राप्त करने के लिए हर पार्टी की शाखा प्रत्येक मास अपनी बैठक में महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास करती है।''[29] दलीयगत राजनीति ने समाज में विसंगतियों को जन्म दिया है। आज के युग में मनुष्य स्वार्थो की पूर्ति हेतु जातीयता और साम्प्रदायिकता का सहारा ले रहा है। समाज के विभिन्न राजनैतिक दलों को कई रूप में जातीयता का पूर्ण समर्थन प्राप्त है; आश्रय प्राप्त है। 'परतीः

परिकथा' उपन्यास में जातीयता के बढ़ते प्रभाव के विषय में लेखक कहता है कि ''पिछले आठ–दस वर्षों से जातिवाद ने काफी जोर पकड़ा है। राजनीतिक पार्टियाँ भी जातिवाद की सहायता से संगठन करना जायज समझती हैं। राजनीति के दंगल में सब–कुछ माफ है।''[30]

राजनीति में धर्मगत एवं जातिगत राजनीति व्यापक रूप से उभरी तथा दलीय स्वार्थ की भावना प्रबल हुई। देश के नेता जाति एवं वर्गहीन समाज की बात करते हैं। परन्तु जातीयता को प्रत्येक राजनैतिक दल का आश्रय प्राप्त है। राजनैतिक दल जाति के आधार पर प्रत्याशियों का चयन करते हैं तथा मंत्रिमण्डल के गठन में जिस जाति के अधिक सदस्य होगे, उनका मंत्रिमण्डल पर अधिक प्रभाव होगा। अनन्त गोपाल शेवड़े के 'भग्न मन्दिर' उपन्यास में मनमोहन बाबू को मंत्रिमण्डल में इसलिए लिया जाता है, क्योकि प्रदेश में उनकी जाति का बाहुल्य है। ''मंत्रिमण्डल के सबसे तरूण सदस्य मनमोहन बाबू जिनकी आयु 30 वर्ष की थी, परन्तु जो मंत्रिमण्डल में केवल इसीलिए लिए गए थे, उनकी संख्या इस प्रदेश में काफी मात्रा में थी।''[31] चुनाव में विजयी होने के लिये धार्मिक एवं जातीय आधार पर प्रलोभन दिये जाते हैं। इस प्रकार राजनीति भ्रष्टाचार का मुख्य केन्द्र बन गई है। राजनैतिक भ्रष्टाचार सरकारी तंत्र से लेकर शहरी–ग्रामीण न्यायिक और शैक्षणिक सस्ं थाओं के प्रत्येक क्षेत्र मे व्याप्त है। अधिकारी गण छात्रोपयोगी सामग्री पर अपना पैतृक अधिकार समझते हैं।'भग्न मन्दिर' उपन्यास में शिक्षण संस्थानों में होने वाला भ्रष्टाचार स्पष्ट दिखाई देता है–''स्कूल कॉलेज खुलते तो अपने आदमियों द्वारा चलाई गई संस्थाओं की ग्राण्टों के लिए हाथापाई होती, प्रोफेसर एवं प्रिंसीपल की नियुक्तियों में हस्तक्षेप होता, परीक्षाओं के रचे और रिजल्ट खुल जाते, शिक्षा विभाग के उच्चाधिकारी या मन्त्री के लड़के को जबरदस्ती मार्कस बढ़ाकर पहला नम्बर दे दिया जाता, और प्रामाणिक विद्यार्थी मेहनत और अध्ययन के साथ तैयारी करते और जिनका स्थान सर्वप्रथम आने का था उनका दिल तोड़ दिया जाता।''[32]

हमारे देश के नेता अपने भाषणो ं में साम्प्रदायिकता की भावना फैलाकर हिन्दू–मुसलमानों के वोटों को विभाजित कर देते हैं।कमलेश्वर जी के 'काली आँधी' उपन्यास में चुनाव जीतने की योजना के सम्बन्ध में मालती कहती है – ''हम जातिवाद के आधार पर कहाँ चुनाव लड. रहे हैं? मैं उनकी जाति की नहीं हूँ। लाला दीनानाथ अगर अपने जाति भाईयो ं को अपनी मुट्ठी मे ं ले लेते हैं और वक्त आने पर हम लाला दीनानाथ को जीत लेते हैं तो इसमें हम जातिवादी हो जाते हैं। बताइए हम पर कौन इल्जाम लगा सकता है इस बात का? और हम कोई गलत बात तो नहीं कर रहे हैं.....।''[33] लाला दीनानाथ को जाति के नाम पर बनियों का सहयोग मिलता है और वह बाद मे ं मालती के पक्ष में बैठ जाते हैं। देश की भ्रष्ट राजनीति ने ग्रामीण राजनीति को भी प्रभावित किया है।

नेता लोग चुनाव जीतने के लिये किस प्रकार के हथकंडे अपनाते हैं तथा चुनाव–प्रणाली कितनी भ्रष्ट हो गयी है, इसका चित्रण मन्नू भण्डारी के ''महाभोज'' उपन्यास में वर्णित है। चुनाव जीतने के लिये एक विधायक हत्या का सहारा लेकर चुनाव जीतने की कोषिष करता है। इसलिए वे हरिजनों का पक्ष लेते हैं क्योंकि ''अभी तक हरिजनों के बूते पर ही चुनाव जीतते आये थे। पिछली बार इन लोगो ं ने आँख फेरी तो मुँह की खानी पड़ी। पर इस बार ैसे आँख फेरेगें? और आखिर क्यों फेरेगें? बिसू सारी जिन्दगी इन्हीं लोगों के लिए तो लड़ता रहा था। वे बिसू की मौत का हिसाब ही तो मांगेंगे सरकार से...इस पर भी लोग उनके सुर में सुर नहीं मिलायेंगे? जरूर मिलायेंगे और हरिजनों को सुर मिल गया तो फिर से सुगम संगीत बजने लगेगा कम–से–कम उनकी अपनी जिन्दगी में तो।''[34] इस प्रकार सुकूल बाबू हरिजनों का साथ इसलिए देना चाहते है कि वह चुनाव जीत सकें। चुनाव प्रणाली की भ्रष्टता ही यहाँ प्रतीत होती है। उसी तरह राजनीतिक निकाय भी वस्तुतः बहुमत पर अल्पमत हुकूमत कायम करते हैं। इसी उपन्यास में सत्तारूढ़ विधायकों एवं पदच्युत विधायकों की पदलोलुपता व धनलोलुपता प्रचण्ड रूप में उजागर हुई है। नेता लोग चुनाव के दौरान तो जनता से वायदे करते हैं और जब पदासीन हो जाते हैं तो जनता की ओर से विमुख हो जाते हैं। जब हरिजनों के टोले में आग लगी थी तब ''लोग दौड़े–दौड़े थाने पहुँचे। पर थानेदार साहब उस दिन छुट्टी पर थे और जो दो लोग यहाँ ड्यूटी पर थे, उन्होंने यह कहकर बात टाल दी कि थानेदार साहब के आने पर ही मौके पर आयेंगे और तहकीकात होगी।''[35] जब इसकी खबर शहर तक पहुँची तो मन्त्रियो, नेताओं और अखबार नवीसों की गाडियाँ आयीं। ''ढेर सारी सहानुभूति और दुख में लिपटकर निकला–''ओह हॉरिबल.....सिम्पली अनह्यूमन। कब तक यह सब चलता रहेगा? त्. ..त्...त्.... ।'' और पन्ना पलट गया। थोड़ी देर बाद गाँव वालो ं की जिन्दगियों की तरह ही अखबार भी रद्दी के ढेर में जा पड़ा।''[36]

इस प्रकार राजनीतिक विघटन विमर्श के माध्यम से अन्तर्गत यादवेन्द्र शर्मा, श्रीलाल शुक्ल ,भगवती चरण वर्मा, फणीश्वर नाथ 'रेणु',भैरव प्रसाद गुप्त, अनन्त गोपाल शेवडे, कमलेश्वर, मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में देश में राजनैतिक मूल्यों का विघटन का बहुरूप देखने को मिलता है, यह देश की राजनीति की विडम्बना है। देश वासियों के सुख, आनन्द के त्याग के परिणामस्वरूप वर्तमान में हमें स्वार्थ लिप्त राजनीति, भ्रष्टाचारी राजनेता, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, भाई–भतीजावाद, मूल्य हीन संस्कृति आदि प्राप्त हुई। राजनैतिक चुनाव सिद्धान्तों पर आधारित न होकर धर्म, जातिवाद पर आश्रित हैं। राजनीति में जातीयता का प्रयोग मोहरे के रूप में किया जा रहा है और इस समस्या को आज के भ्रष्ट नेता प्रोत्साहित करते हैं इसीलिए आज तो व्यक्ति जातिगत ही सोचता है यही उसकी मानसिकता हो गई है। राजनीति के सत्ता–मोह, दलीय स्वार्थ एवं आपसी प्रतिद्वन्द्विता ने देश को इस स्थिति तक पहुँचा दिया है, राष्ट्र राजनीति में स्वार्थ और सत्ता हथियाने की ललक ने राजनैतिक विघटन व विसंगतियों को जन्म दिया। राजनीति के असामंजस्य से उत्पन्न विरसता ने वर्तमान भारतीय परिवारों को विश्रृंखलित ही नहीं किया है, अपितु भावी जीवन में पारिवारिक जीवन के सम्बन्धों के बिखराव को भी इंगित कर दिया है। राजनेताओं की स्वार्थ–भावना, भ्रष्टाचार तथा पद–लोलुपता का अनवरत चलने वाला क्रम राजनीति में आज भी जारी है। जातिवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार आदि भारतीय समाज की प्रगति के मार्ग में भी विशाल अवरोधक हैं; इन तत्वों का बहिष्कार जब तक भारतीय जन–जीवन से नहीं होगा, तब तक देश और समाज की प्रगति में प्रश्नचिह्न लगे ही रहेगें।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रजनी कोठारी,भारत में राजनीति,कल और आज,पृ 25।
2. विपन चन्द्र, आधुनिक भारत में राजनीति, पृ 9।
3. डॉ नगेन्द्र नाथ वसु,हिन्दी शब्दकोश, खंड 21 पृ 298।
4. सं रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पांचवां खण्ड, पृ 51।
5. मुकन्दी लाल श्रीवास्तव, ज्ञान शब्दकोश, पृ 731।
6. सं हरदेव बाहरी, हिन्दी अंग्रेजी शब्द कोश, पृ 586।
7. सं श्रीपाद जोशी बृहत् हिन्दी मराठी शब्दकोश,पृ 558।
8. सं शिव राम आपटे,संस्कृत हिन्दी कोश ,ष्पृ 928।
9. नीरज जैन, व्यक्तित्व विघटन के विविध आयाम,पृ 136।
10. रामचंद्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पृष्ठ 77।
11. नवल जी, नालन्दा विशाल शब्द सागर,, पृष्ठ 1276।
12. सत्य प्रकाश, बलभद्र प्रकाश, मानक हिन्दी अंग्रेजी कोश,, पृष्ठ 355।
13. अर्जुन चव्हाण, विमर्श के विविध आयाम,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2008।
14. नन्दकिशोर आचार्य, सर्जक का मन, पृ 54।
15. मैनेजर पाण्डेय, शब्द और कर्म, पृ 37।
16. रमेश देव,समाज और साहित्य सम्बन्धों के राग चिराग,चिन्तन सृजन,वर्ष 3, अंक4, पृ सं 34।
17. विपन चन्द्र, आधुनिक भारत में राजनीति, पृ 9।
18. यादवेन्द्र शर्मा; एक और मुख्यमन्त्री; पृ0 सं0 343।

19. वही, पृ0 सं0 45
20. वही, पृ0 सं0 156।
21. वही, पृ0 सं0 46।
22. वही पृ0 सं0 47।
23. श्री लाल शुक्ल; रागदरबारी पृ0 सं0 162
24. वही, पृ0 सं0 163।
25. भगवती चरण वर्मा; सबहिं नचावत राम गोसाई; पृ0सं0 87, 88
26. फणीश्वर नाथ रेणु; मैला आँचल; पृ0 सं0 116
27. वही ,पृ0 सं0 116।
28. भैरव प्रसाद गुप्त; सती मैया का चौराहा; पृ0 सं0 548
29. फणीश्वर नाथ रेणु; परतीः परिकथा; पृ0 सं0 19
30. फणीश्वर नाथ रेणु; परतीः परिकथा; पृ0 सं0 19
31. अनन्त गोपाल शेवड़े; भग्न मन्दिर; पृ0 सं0 132
32. वही ,पृ0 सं0 132।
33. कमलेश्वर; काली आँधी; पृ0 सं0 27।
34. मन्नू भण्डारी; महाभोज; पृ0 सं0 147।
35. वही ,पृ0 सं0 31।
36. वही ,पृ0 सं0 148।

Net Sources

1. www.pravasiduniya.com/.../yadvendra-sharma-chandr...
2. https://www.scribd.com/doc/12581579/Kamleshwar
3. en.wikipedia.org/wiki/Aandhi
4. hi.wikipedia.org/wiki/फणीश्वर_नाथ_'_रेणु_
5. en.wikipedia.org/wiki/Maila_Anchal
6. en.wikipedia.org/wiki/Parti_Parikatha
7. www.kalpana.it/eng/writer/indian_writers/phanishwarnath_renu.htm
8. en.wikipedia.org/wiki/Manu_Bhandari
9. www.infibeam.com/.../mannu-bhandari/mahabhoj.../
10. en.wikipedia.org/wiki/Manu_Bhandari
11. swarajyamag.com/tag/anant-gopal-shevade/
12. www.hindisamay.com/writer/भैरव-प्रसाद-गुप्त....
13. hi.wikipedia.org/wiki/भगवती_चरण_वर्मा
14. www.infibeam.com/.../bhagwati-charan-verma/...nachavat-ram.